प्रेसनोट डाट इन

भूख के खिलाफ जंग - बाबूलाल नागा

(565 बार पढ़ी गयी)

Published on : 18 Oct, 13 16:10

बारां मे पहले की अपेक्षा अभी गरीब आदिवासियों की स्थिति में बदलाव जरूर आया है लेकिन भुखमरी के हालात अभी भी पहले जैसे ही है। आज भी सहरिया और खैरुआ जनजाति के लोग भूख और कुपोषण जनित पीड़ा का दंश झेल रहे हैं। रोटी के लिए संघर्ष का सिलसिला दशकों से बदस्तूर जारी है। उन्हें दो वक्त की रोटी के लिए मशक्कत करनी पड़ रही है।

बारां जिला हर बार कुपोषण, भुखमरी व बंधुआ मजदूरी के कारण चर्चा में रहता आया है। वर्ष 2002 में बारां जिले में अकाल के चलते 18 लोगों की मौत हुई थी जिनमें 12 बच्चे थे। इनमें दो को छोड़कर सारी मौतें एक महीने के दौरान हुईं। अकाल के समय लोगों को समा (एक जंगली घास के बीज) की रोटी खाते हुए देखा जाता। लोग समा इसलिए खाते थे क्योंकि खाने के लिए कुछ नहीं होता था, न कि इसलिए कि उन्हें यह स्वादिष्ट लगती। उस दौरान यह घास खाने के बाद एक ही परिवार के तीन लोग चल बसे थे। अकाल के समय लोग फाग उबालकर खाते। यह एक जंगली हरी वनस्पति होती है। लोग इसकी पत्तियां उबालकर खाते। जब खाने को कुछ नहीं होता था तो तब ही वे ऐसा करते थे। पांच लोगों के परिवार के पास आधा किलो से ज्यादा आटा नहीं होता था। इसलिए वे आटे को उबालकर लापसी बनाकर खाते। परिवार के हर सदस्य के हिस्से में एक कटोरी उबला आटा मिलता। छोटे बच्चों को छोड़कर माताएं जमीन खोदकर खाने के लिए जड़ों की तलाश करती। सहरिया जाति अनाज की कमी के कारण जंगल में पैदा होने वाले बेर व छरेटा (पत्ती) भी खाती। अकाल की इस विभीषिका को एक दशक से ज्यादा समय गुजर गया लेकिन आज भी सहरिया जनजाति के लोग वर्ष भर में करीब चार महीने जंगलों से मिलने वाली घास व पत्तियों पर निर्भर हैं जिन्हें ये हरी सब्जी के रूप में काम में लेते हैं। शाहाबाद तहसील के सांधरी गांव के श्रीचंद सहरिया व रूपचंद सहरिया ने बताया कि महीने में दस पंद्रह दिन ही रोटी के साथ सब्जी खा पाते हैं। बाकी दिनों जंगलों से बिछुडिया, कूटज का फूल व पुवार तोड़कर लाते हैं। ये सब हरी सब्जी का काम करती है। सनवाड़ा, चोराखाड़ी, हरीनगर, मडी सांभर सिंगा, बीलखेड़ा सहित कई गांवों के सहरियाओं का भी ये ही कहना था। जंगल में पैदा होने वाली हरी सब्जी के रूप में पवार, सरेटा, बीछोता, पांग, बासी, कुटज का फूल व सेजन का फूल जंगलों से लाकर काम में लेते हैं। सामान्यतः जुलाई से अक्टूबर माह तक इन्हें जंगलों से ये सब मिल जाते हैं। बरसात के दौरान जंगल व चरागाह भूमि पर बड़ी मात्रा में यह घास व फूल पत्ती उग आती है। जिनका इस्तेमाल सहरिया अपनी भूख मिटाने के लिए करते हैं। जिस दिन जंगलों से ये सब न मिले उस दिन बिना सब्जी के रोटी खानी पड़ती है। अभावों से जूझ रहे इन सहरियाओं के लिए जंगलों से प्राप्त ये घास फूस भोजन का जरिया बने हुए हैं। किशनगंज क्षेत्र के सुवांस गांव में गेहूं के जुगाड़ के लिए लोग सुवा घास की

छंटाई कर पौधे की एक एक शाख (डाल) को अलग करते हैं। लोग इस घास को काट पौधे की शाखाओं को अलग अलग कर सुखाते हैं। बाद में इसके डेढ़ से दो किलो वजन के पूले (गट्ठर) बना मध्यप्रदेश के मकड़वदा में ले जाते हैं, जहां उन्हें पूले के वजन के बराबर गेहूं देते हैं। सुवांस ग्राम पंचायत समेत क्षेत्र के आधा दर्जन गांवों के लोगों की कमोबेश यही दिनचर्या है। जंगलों से मिलने वाली वनस्पति इनके आय का जरिया भी बनी हुई है। अप्रैल से अक्टूबर तक जंगलों से गोंद तोड़ते हैं। एक दिन में औसतन एक किलो गोंद तोड़ लेते हैं। सौ से डेढ़ सौ रुपए किलो के भाव से ये गोंद बेचते हैं। सीजन के चार पांच महीने में औसतन एक परिवार गोंद से चार पांच हजार रुपए की आमदनी कर लेता है।

© CopyRight Pressnote.in | A Avid Web Solutions Venture.